REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 11 | AUGUST - 2022

भीष्म साहनी की कहानियों में चित्रित बचपन का रेखांकन

उमा मिश्रा[1] & डॉ. वंदना त्रिपाठी[2]
[1]शोधार्थी हिन्दी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.).
[2]सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर, महाविद्यालय रीवा (म.प्र.).

सारांश –

भीष्म जी ने छोटे बच्चों के लिए बाल–साहित्य भी लिखा है। इसके अन्तर्गत उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं– (1) 'गुलेल का खेल' (सन् 1989), (2) 'वापसी' (सन् 1989)। लेखक के व्यक्तिगत अनुभव का बोध कराने वाली ये दोनों कृतियाँ 'मैं' शैली में लिखी गई हैं। 'गुलेल का खेल' की कथा में सदाचार की सद्वृत्ति के उपदेश के साथ ही इस मनोवैज्ञानिक तथ्य का भी उद्घाटन किया गया है कि बुरे से बुरे व्यक्ति में भी विकास की संभावनाएँ निरन्तर बनी रहती हैं। 'वापसी' में लेखक ने पशुओं के माध्यम से मानवीय प्रवृत्तियों का प्रभावपूर्ण रेखांकन किया है।

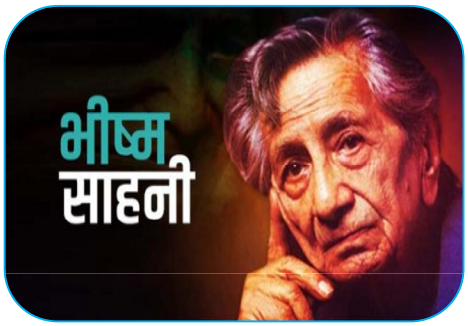

मुख्य शब्द – भीष्म, बाल–साहित्य, एवं लेखक ।

प्रस्तावना –

समकालीन कहानीकारों में से वे एक ऐसे कहानीकार हैं जिन्होंने इस देश के पीड़ित, शोषित और दलित समाज की संवेदनाओं की अभिव्यक्ति बड़ी ईमानदारी से की। वर्गीय और सामाजिक विषमताओं से जुड़ी उनकी कहानियों में मानव जीवन के शाश्वत सत्यों की अभिव्यक्ति हुई है। इसीलिए उनकी कहानियों का महत्व देश और काल की सीमा को लांघ कर सार्वदेशिक और सर्वकालिक हो गया है।

भीष्म जी ने नारी जीवन के विभिन्न रूपों को दर्शाते हुए उनकी अनेक समस्याओं और प्रश्नों को बड़ी मार्मिकता से उठाने का प्रयास अपनी कहानियों में किया है। नारी जीवन के अनेक पहलू और पक्ष उनकी कहानियों में चित्रित हैं। भिन्न–भिन्न स्वभाव और व्यक्तित्त्व की नारी की मानसिकता को टटोलने का प्रयास भीष्म जी ने किया है और निःसंदेह उन्हें अपने इस प्रयास में बड़ी सफलता प्राप्त हुई है क्योंकि जिन नारी चरित्रों को उन्होंने अपनी कहानियों में उभारा है वे अपने आस–पास के जीवन के ही हैं। वे स्वयं मानते हैं कि जीवन के चतुर्दिक व्याप्त यथार्थ ही उनकी रचना का प्रधान उपजीव्य है। भीष्म जी के नारी चरित्रों के चित्रण में भी यथार्थ की कलात्मक अनुभूति हमें देखने को मिलती है।

मानवीय संबंधों पर प्रश्नचिन्ह लगाती भीष्म जी की यह कहानी केवल गंगो और घीसू तक ही सीमित नहीं है। लेखक ने कहानी में घीसू का बेटा रीसा जिसकी उम्र केवल 5–6 वर्ष की है, उसके माध्यम से बाल–अवस्था में किस तरह उसे मेहनत करनी पड़ती है इसको भी चित्रित किया है। आर्थिक विवेचना को भोगते

हुए माता–पिता उस छोटी–सी जान को कुछ भी कमाने के लिए प्रेरित करते हैं। रीसा की खेलने–कूदने की उम्र है। घीसू के कहने पर 'रीसा' काम पर निकल पड़ता है। घीसू के एक मित्र गणेशी से वह बूट–पॉलिश के काम में लग जाता है। किसी तरह काम सीखकर वह दो पैसे कमाने की इच्छा रखता है। रीसा को क्या पता कि यह संसार कितना निर्दयी और कठोर है। जूतों की पॉलिश का काम तो वह सीख गया, किन्तु इस काम ने उसे जो अनुभव दिए उससे उसका बालमन तार–तार हो गया।

किसी ने उसे चांटा मारा तो कोई उसे डांट कर बिना पैसे दिए चल दिया। ऐसी स्थिति में भी रीसा बूट–पॉलिश का काम करते रहा और एक दिन उसने अचानक अपने आपको उन चार लड़कों के बीच पाया जो उसे धक्का देकर मार रहे थे। उनमें से एक ने कहा, 'तू हमारे साथ रह, हम भी बूट–पॉलिश करते हैं' और सीधा आधी रात तक एक बरामदे में उन्हीं के साथ सोया पड़ा रहा। इधर घीसू और गंगो उसकी राह देखते–देखते थक कर सोने लगे। आर्थिक विपन्नता की स्थिति में जीने वाले घोर निराशा में भी किस प्रकार की आशा रखते हैं, यह इस कहानी में देखा जा सकता है। रीसा के न आने पर घीसू गंगो को आश्वासन देते हुए कहता है, ''मरेगा नहीं, घीसू का बेटा है, कभी न कभी तुझे मिलने आ जायेगा।''[1]

घीसू का मन बेटे के जाने पर व्याकुल था, और वह दारुण सत्य को भी न भूल सकता था कि अब झोपड़े में दो आदमी होंगे। भीष्म जी की यह कहानी संवेदनशील पाठकों के मन में अनेक प्रश्न उपस्थित करती है। आर्थिक विषमता और बेकारी ने मनुष्य को इतना विवश और असमर्थ बना दिया कि वह स्थिति के साथ केवल समझौता ही कर सकता है, यही उसकी मजबूरी है। यह कहानी एक ओर मजदूरी करके पेट भरने वाले वर्ग का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

विश्लेषण –

'भाग्य–रेखा' कहानी संग्रह की घर बेघर कहानी की एक ऐसी औरत है जिसके पास न तो घर है और न परिवार। पहले थानेदार ने उसे एक कोठरी दी थी और उसी में वह एक लड़के के साथ रहती थी। नये थानेदार ने जब यह केस अपने हाथ में लिया तो इस औरत की कहानी को सुनकर उसे आश्चर्य हुआ। हवलदार ने उसे यह भी बताया कि एक आदमी लगातार वहाँ चक्कर लगा रहा था इसलिए उसे भी उन्होंने अंदर कर दिया है। यह व्यक्ति परशराम है। मानवीय संबंधों के आधार पर वह इतना ही कहना चाहता है कि वह लड़का उस औरत के साथ रहे। थानेदार और उसके मित्र को यह बात समझ में नहीं आती, क्योंकि परसू बूढ़ा हो चुका है और एक छाबड़ी चलाकर अपना गुजारा करता है। उसके रहने का कोई भी ठिकाना नहीं है। थानेदार के बार–बार पूछने पर भी कि वह यहाँ क्यों चक्कर लगा रहा है? और यह औरत उसकी कौन लगती है? तो उसने उत्तर में कुछ नहीं कहा। क्योंकि परसू की इच्छा है कि बच्चा और औरत उसी कोठरी में रहे जो उसे पहले के थानेदार ने दी थी। कहानी के अंत में इतना ही कहा गया है कि हवलदार ने यह देखा कि वह बूढ़ा चला जा रहा है और उसके पीछे दौड़कर वह लड़का भी उसके साथ जा रहा है। कोठरी में रहने वाली औरत भी उन दोनों के पीछे जा रही है। इस दृश्य के साथ कहानी समाप्त हो जाती है।

भीष्म साहनी ने 'गंगो का जाया' कहानी में दीन–दुःखी श्रमिक दम्पति की विडम्बना का उल्लेख किया है। गंगो गर्भवती श्रमिक नारी है।

गर्भवती मजदूरन को कौन काम देगा? उस रात गंगो और उसका पति घीसू देर तक इस स्थिति के बारे में सोचते रहे। घीसू गंगो पर नाराज हो रहा था उसने दूसरी जगह काम क्यों नहीं तलाश किया। पर गंगो को इस हालत में कौन काम देगा?

झोपड़े में उनका छह बरस का लड़का रीसा सो रहा था। घीसू चिन्तित था कि कमाने वाला एक खाने वाले तीन, उस पर गंगो की ये हालत। उसने गंगो को गाँव की ये हालत। उसने गंगो को गाँव चले जाने को कहा पर वह नहीं मानी। चार–पाँच दिनों में घर की स्थिति डावाँडोल हो गई। गंगो काम की तलाश में सुबह निकलती और दोपहर को हताश लौटती। कोई इस पर हँसता तो कोई आकाश में छाये बादल दिखा देता। सरकारी सड़क पर का काम भी खत्म हो गया तो घीसू भी बेकार हो गया। अब तो चूल्हा भी कभी जलता कभी नहीं। पेट भर खाना भी नसीब नहीं होता था। रीसा जो दिनभर खेलता रहता था अब भूख के कारण झोपड़े के आसपास डोलता रहता।

चिलम पीते–पीते घीसा के मन में एक विचार कौंध गया कि क्यों न रीसा को किसी काम पर लगा दें। गंगो ने विरोध किया कि वह छोटा है, वह क्या काम करेगा? क्योंकि रीसा अभी अपने बाप का हाथ पकड़कर चलता है। पर घीसू नहीं माना। उसने रीसा को बूटपॉलिश का काम सिखाने के लिए गणेशी को सुपुर्द करने का निश्चय किया। गणेशी घीसू के गाँव का ही व्यक्ति था। दूसरे दिन घीसू काम की खोज में जाते समय गंगो से कहता है कि मैं गणेशी से बात कर लूँगा, तू रीसा काम पर निकलता है।

घीसू खुद उसे गणेशी के पास छोड़ आया और पाँच–सात आने की पॉलिश की डिबिया और ब्रश के भी पैसे गणेशी को दे आया। उस दिन भी रीसा घूम–फिर के वापस आ गया। घीसा जब काम पर से लौटा तो रीसा उसके जूते पॉलिश करने लगा। इस पर घीसा हँसते हुए कहता है कि ''मेरा नहीं, किसी बाबू का करना जो पैसे भी देगा।''[2] दूसरे दिन बाप–बेटा एक–एक चिथड़े में अपनी–अपनी रोटियाँ बाँधे अपनी–अपनी दिशा में चल पड़े।

धीरे–धीरे शाम हो गई और थोड़ी देर बाद गलियों में अंधेरा छाने लगा। एक गली के नुक्कड़ पर कुछ लड़कों का टोला उसके पास आ पहुँचा। एक ने अपनी फटी हुई टोपी ठीक करते कहा– ''अबे साले रोता क्यों है?''[3] किसी ने उसका बाजू पकड़ा, किसी ने धक्का दिया। एक ने उसकी झोली में मूँगफली डालते हुए कहा कि हमारे साथ रहा कर, हम भी बूट पॉलिश करते हैं।

आधी रात गए नन्हा रीसा अपने सिर के नीचे ब्रश और पॉलिश की डिबिया और एक छोटा–सा चिथड़ा रखे नये साथियों के साथ भाग्य की गोद में सो गया। उधर झोपड़े में कई घंटे की विफल खोज के बाद घीसू गंगो को आश्वासन दे रहा था कि ''मुझे कौन काम सिखाने आया था? सभी गलियों में ही सीखते हैं। मरेगा नहीं, घीसू का बेटा है, कभी न कभी तुझे मिलने आ जाएगा।''[4] घीसू, बेटे के चले जाने से व्याकुल तो था पर इस कड़वे सत्य को भी स्वीकार कर रहा था कि अब झोपड़े में दो ही व्यक्ति रह गए हैं। गंगो अपने झोपड़े में लेटी शून्य में ताक रही थी। उसके पेट में दूसरे बच्चे ने जैसे करवट ली। गंगो ने सोचा–यह क्यों जन्म लेने के लिए इतना बेचैन हो रहा है? गंगो के द्रवित कर देने वाले इस प्रश्न के साथ कहानी खत्म होती है।

पटरियाँ कहानी का पात्र केशोराम अपने श्वसुर चोपडा साहब के दुर्व्यवहार से दुःखित है। उसे लगता है कि सबसे बड़ी चीज दुनिया में पैसा है, पोजीशन है। बाकीसब ढकोसला है। सब बकवास है। ताकत और पैसा और रोब–दाब, इनसे बढ़कर कोई चीज दुनिया में नहीं है, जिसके पास पैसा है, उसके पास सब कुछ है।''[5]

केशोराम बहुत कोशिशों के बावजूद अपने जीवन की गाड़ी को पटरी पर नहीं ला पाता। उसमें क्रान्ति और विद्रोह की चेतना जागती तो है, पर वह सफल नहीं हो पाता। सोने की सड़क पर भागने वाले अमीरों की तेज रफ्तार में गरीब केशोराम अपनी जिन्दगी की गाड़ी को नहीं चला पाता। पटरियाँ जीवन को व्यवस्थित गति देने वाले साधन का प्रतीक है।

'झुटपुटा' और मनुष्य को जोड़ने वाले सम्बन्धों के बल पर दुनिया टिकी हुई है – चल रही है। 'झुटपुटा' कहानी इसी सत्य को उजागर करती है। वर्तमान में हो रहे दंगों के पीछे कार्यरत अक्सर असामाजिक तत्व ही होते हैं। लेखक ने सन् 1984 में हुए सिक्ख विरोधी दंगों का यथार्थ चित्रण करके यह स्पष्ट किया है कि दंगों के बाद भी मानवीय संवेदनाएँ अपनी जगह कायम हैं! सिक्खों की जिन लोगों ने हत्या की, उनकी सम्पति को लूटा वे गुण्डे थे, लुटेरे थे, मात्र निश्चित नहीं थे। क्योंकि ''दंगों में लोग दुश्मन को पहचानते हैं, एक–दूसरे को ललकारते हैं, एक–दूसरे का पीछा करते हैं, पर यहाँ तो सड़क खाली थी और दुकान को जो चाहे तोड़ जाए, जो चाहे जला जाए। दंगे ऐसे तो नहीं होते। लुटेरों में एक भी चेहरा पहचाना नहीं था, एक भी आदमी अपने मुहल्ले का नहीं था। क्या हम इसे दंगा कह सकते हैं?''[6]

इन दंगों के बावजूद हिन्दू–सिक्खों के बीच जो मानवीय रिश्ते बने थे, वे टूटे नहीं थे। जिनको लूटा जा रहा था, जिनकी सम्पति को क्षति पहुँचायी थी, और जिनकी हत्या हो रही थी, उसी वर्ग का एक सिक्ख ड्राइवर दूध का टैंकर ले आता है। इस हालत में सरदार ड्राइवर को देखकर सब हैरत में आ जाते हैं। तब वह कहता है कि ''बाबा बच्चों ने दूध तो पीना है ना। मैंने कहा, चल मना, देखा जाएगा जो होगा। दूध तो पहुँचा आऊ।''[7]

भीष्म साहनी हिन्दी कहानी जगत के ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने देश–विभाजन की घटना अपनी आँखों से देखी है। इसलिए उनकी अधिकांश कहानियाँ उस समय और घटना तथा परिवेश में बार–बार लौट जाती है जिसका सम्बन्ध हमारे देश के बँटवारे से है। खूनी साम्प्रदायिक दंगे, शरणार्थियों के काफिले और वर्गघृणा का जहर किसी न किसी रूप में उनकी चेतना को सालता रहा है। उनकी लगभग हर महत्वपूर्ण कहानी में पंजाब

का परिवेश मौजूद है। उन्होंने पंजाब तथा पंजाब के आस–पास के गाँवों और महानगरों में बसने वाले निम्न और मध्यमवर्गीय लोगों को पूरी जीवंतता के साथ अपनी कहानियों में उकेरा है।

संवेदनशील जैनब पाँच साल बाद बच्चे को न चाहते हुए भी भावना के ज्वार में बहकर उसके असलीपिता को सौंप देती है। बच्चे के पिता की छटपटाहट उससे देखी नहीं जाती। जब बच्चे का असली पिता पत्नी की जान की भीख माँगता है तो उसका संवेदनशील हृदय रो पड़ता है। वह टूटी–फूटी आवाज़ में कहती है कि ''ले जाओ अपने बच्चे को। हम नहीं चाहते किसी बदनसीब की बद्दुआ हमें लगे ..... ''[8] वह अंत तक पालित बच्चे को भूल नहीं पाती। उसका हृदय बार–बार तरह–तरह के कयास लगाता रहता है– ''क्यों जी, ईद पर आएगा ना? उसे वे लोग भेजेंगे ना? क्या हम उसे मिलने नहीं जा सकते?''[9] शकूर और जैनब के चरित्र में ममता धर्म और मजहब की संकुचित सीमा से ऊपर स्थापित मनुष्यता के दर्शन होते हैं।

भीष्म जी ने युगीन वैचारिकता से बहुत कुछ स्वीकार किया है। अपने जीवन में रचनाकार जो अनुभव करता है वह तत्कालीन वैचारिकता के अनुरूप ही अपने मानस पटल पर रेखांकित कर लेता है और साहित्य में फिर उसी को प्रतिबिम्बित करता है। कई बार युगीन विचारधारा और स्वयं के अनुभव से लेखक बहुत कुछ सहता है और यह सहना ही उसे बहुत कुछ अनुभूति दे जाता है। इस संदर्भ में स्वयं भीष्म जी का कथन दृष्टव्य है, ''हर चोट का दर्द मैंने बहुत बाद में ही महसूस किया है, उसका अर्थ और महत्व भी बहुत बाद में ही समझ पाया हूँ। यह भी देखता हूँ कि जिंदगी में कई बार हल्के–से झटके मन पर गहरा असर छोड़ गये हैं जबकि बड़ी–बड़ी मुसीबतें कहीं कोई खरोंच तक नहीं छोड़ पाई हैं, या शायद मुझे ऐसा लगता है, अतीत के गुंझलों में से किसी सूत्र को पकड़ पाऊँ, बड़ा कठिन काम है।''[10] जीवन में कई सारी चीजें ऐसी होती हैं जिन्हें आदमी बचपन में घटी घटनाओं के प्रभाव के कारण ग्रहण करता है, वह उन स्थितियों से प्रभावित होता है। कई संस्कार होते हैं जिन्हें आदमी बचपन से ग्रहण करता है, वह उन स्थितियों से प्रभावित होता है। कई संस्कार होते हैं जिन्हें आदमी बचपन से ग्रहण करता है और यह संस्कार कहीं न कहीं विचारों पर प्रभाव डालते हैं। कई बार इनका प्रभाव बहुत गहरा रहता है। ऐसे ही बचपन के संस्कार और इसके प्रभाव के विषय में स्वयं भीष्म साहनी कहते हैं, ''बहुत कुछ है जो अपने बचपन से हम संस्कार स्वरूप ग्रहण करते हैं, ज्यों–ज्यों बालक अपने परिवेश पर आँखे खोलता है, जो–जो कुछ वह देखता–सुनता है, वही संस्कार बनता जाता है।''[11]

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः सर्वसामान्य व्यक्ति के जीवन में जो घुटन और बिखराव व्याप्त हुआ है उसी को लेखक ने मानवीय सम्बन्धों की पहचान के संदर्भ में विश्लेषित किया है। यदि कहा जाए कि भीष्म साहनी जी की कहानियाँ व्यक्ति के समाजगत चिंतन को लेकर मानवीय संबंधों की पहचान कराती हैं, तो यह अधिक उपयुक्त होगा। भीष्म साहनी के कथा साहित्य को पढ़ने से स्पष्ट होता है कि साहित्य के प्रति उनका दृष्टिकोण मनुष्य के संघर्ष को सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिकता के साथ आगे बढ़ाना है। उनका कथा साहित्य यथार्थवाद की सृजनशील परिस्थितियों को स्पष्ट करता है।

संदर्भ –

[1] भीष्म साहनी – भाग्य–रेखा, गंगों का जाया, पृष्ठ 88
[2] भीष्म साहनी – गंगों का जाया, पृष्ठ 85
[3] भीष्म साहनी – गंगों का जाया, पृष्ठ 87
[4] भीष्म साहनी – गंगों का जाया, पृष्ठ 87
[5] भीष्म साहनी – पटरियाँ, पटरियाँ, पृष्ठ 11
[6] भीष्म साहनी – झुटपुटा, पाली, पृष्ठ 50
[7] भीष्म साहनी – झुटपुटा, पाली, पृष्ठ 56
[8] भीष्म साहनी – पाली, पाली, पृष्ठ 28
[9] भीष्म साहनी – पाली, पाली, पृष्ठ 34
[10] भीष्म साहनी – अपनी बात, पृष्ठ 17
[11] संपादक राजेश्वर सक्सेना – असगर बजाहत, भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, पृष्ठ 11